मन, वचन, काया का संचालन कौन?

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,
पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

मन, वचन और काया से मानव सांसारिक गतिविधियों का संचालन करता है। मन के द्वारा चिंतन, वचन के द्वारा वाणी का व्यवहार और काया के द्वारा संसार के गतिविधि करता है। मन, वचन और काया में संतुलन होना आवश्यक है। संतुलन से ही सृष्टि चलती है। संतुलन के बिगड़ जाने से अव्यवस्था फैल जाती है। संसार का व्यवहार बाह्य और आंतरिक दो रूपों में देखा जाता है। बाह्य संसार जगत कहलाता है। जगत जड़ है। शरीर के माध्यम से हम कार्य करते हैं। शरीर को चलाने वाला आत्मा है। आत्मा ही संचालक है। शरीर जड़ है, नश्वर है। आत्मा चेतन और अविनाशी है। आत्मा के कारण ही जड़वत् शरीर चेतन प्रतीत होता है। यदि आत्मा न रहे तो शरीर गतिविधि नहीं हो सकती।

यह जगत् दो तत्वों से मिलकर बना है– जड़तत्व और चेतनतत्व। जड़तत्व वह है जिसमें पूरण और गलन की क्रिया होती है। दर्शन की भाषा में इसे पुद्गल या भौतिक तत्व कहते है। आत्मतत्व वह तत्व है जिसमें हलन–चलन कि क्रिया होती है। ये दोनों तत्व शाश्वत है। इनके गुण पृथक–पृथक है। दोनों को मिश्रण को संसार कहते है। शरीर भौतिक तत्वों से बना है। चेतनतत्व इसे संचालित करता है। यदि चेतनतत्व न रहे तो शरीर नष्ट हो जायेगा। आत्मा हर प्राणी में होती है। शरीर के नष्ट होने पर आत्मा एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में अपने कर्म के अनुसार चली जाती है।

जड़तत्व इस ब्रह्माण्ड में रहता है। जब तक कार्मण शरीर का आत्मा से संबंध रहता है तब तक जीव को शरीर धारण करना पड़ता है। जब आत्मा कर्मों से मुक्त होती है तो वह मोक्ष को चली जाती है। संयोग, वियोग, सुख, दुःख चलता रहता है। आत्मसाक्षात्कार के द्वारा आत्मा मुक्त होता है। इस संसार में अनेक विद्याये है। किन्तु आत्मविद्या सबसे बड़ी विद्या है जिसको इस विद्या का ज्ञान हो जाता है उसके लिए कुछ भी अज्ञात नहीं रहता है। जिसने इस विद्या को जान लिया वह सबकुछ जान लेता है। इसलिए कहा गया है– जे एगं जाणइ ते सव्वं

जाणइ, अर्थात् जो एक को जान लेता है वह सबको जान लेता है। आत्मा ही एक ऐसा तत्व है जिसको जान लेने के बाद सबकुछ जान लिया जाता है।

उपनिषदों में आत्मतत्व का बृहद् रूप से व्याख्यान है। अब प्रश्न उठता है कि आत्मतत्व को जाना कैसे जाये। आत्मतत्व के ज्ञान की अनेक विधियां बताई गयी है। राग–द्वेष रहित होकर आत्मतत्व की प्रेक्षा करने से आत्मतत्व का दर्शन होता है। आत्मा में अनंत ज्ञान अनंत दर्शन और अनंत सुख का स्रोत है। मानव भौतिक सुखों के प्रति आकृष्ट होकर जीवनभर उसी में लिप्त रहता है और इसी को बहुत बड़ा सुख मानता है। किन्तु अंदर सुख भंडार इतना विशाल है कि उसका ज्ञान हो जाने पर उसका स्रोत निरंतर प्रवाहित होता रहता है। मैं कौन हूं? कहां से आया हूं? कहां जाऊंगा ? इन तीन प्रश्नों से आत्मसाक्षात्कार प्रारंभ होता है। मानव अपने आत्मा को जानने का कभी प्रयास ही नहीं करता उसकी दृष्टि बहिर्मुखी होती है। सत्संग के प्रभाव से शास्त्रों के अध्ययन से और गुरुओं के सान्निध्य से जब मानव का विवेक जागृत होता है तो उसे आत्मतत्व जानने की प्रेरणा मिलती है।

संसार का आनंद आत्मतत्व के आनंद का बिंदुमात्र है। आत्मतत्व का आनंद सिंधु के समान है और सांसारिक आनंद बिंदु के समान है। हम बिंदु के आनंद को ही सबकुछ मानकर बैठ जाते है। इसीलिए ऋषि, महर्षि, मुनि जो ब्रह्मलीन रहते है, वे संसार को मिथ्या समझते है। वैदान्त दर्शन में ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या का उद्घोष किया गया है। वेदान्त दर्शन के व्याख्याता श्रीमदाद्य भगवान् शंकराचार्य ने आत्मतत्व को सत्य माना और दृश्यमान संसार को मिथ्या। प्राय सभी दर्शनों में आत्मा और जगत् के ऊपर चिंतन हुआ है। कुछ दर्शन दोनों को सत्य मानते है, कुछ दर्शन जगत को प्रातिभाषिक सत्य मानते है। कुछ दर्शन केवल जगत् को ही सत्य मानते है और आत्मा की सत्ता में विश्वास नहीं करते। इस प्रकार भिन्न–भिन्न दर्शनों का भिन्न–भिन्न मत है। किन्तु आत्मतत्व की सत्ता को स्वीकार किये बिना जगत की सत्ता को सिद्ध ही नहीं किया जा सकता। जो लोग जगत को ही सबकुछ मानते है वे कंचन कामिनी के आनंद में ही अपना सबकुछ बिता देते है और अमूल्य मानव जीवन को नष्ट कर देते है।

आत्मसाक्षात्कार की यात्रा कंचन कामिनी के त्याग से प्रारंभ होती है। इसको त्यागे बिना आत्मसाक्षात्कार बड़ा ही दुर्लभ है। मानव का जीवन संसार की आपाधापी में लगा रहता है।

जब दुनियादारी से मुक्ति मिलती है तभी आत्मसाक्षात्कार होता है। आत्मासाक्षात्कार ही मानव का प्रमुख धर्म है। आत्म शुद्धि साधनं धर्म इस परिभाषा के अनुसार धर्म वह तत्व है जिससे आत्मा शुद्ध होती है।

आत्मा मूल रूप से ज्ञानस्वरूप है। वस्तु का स्वभाव ही धर्म कहलाता है। जो इतर चीजें होती है वह अधर्म है। जैसे पानी का गुण है शीतलता, अग्नि का धर्म है उष्णता। जब उनके गुण को विकृत किया जाता है तो उनका स्वरूप बदल जाता है। जब वह अपने स्वरूप में रहता है तो वह तत्व धर्म तत्व कहलाता है। धर्म व्यक्ति को व्यक्ति से जोड़ता है। शरीर पंचभूतात्मक है। आत्मा इससे परे है। शुद्ध आत्मा ज्ञान दर्शन और चारित्र से युक्त है। आत्मा अरूपी है आत्मा ही शरीर का संचालन करती है।